**ओ३म्**

**सत्य मत स्थापनार्थ मिथ्या मान्यताओं का खण्डन व आलोचना आवश्यक**

**‘सत्यार्थ प्रकाश संसार का सर्वोत्तम व सर्वहितकारी ग्रन्थ’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

महर्षि दयानन्द ने विश्व का सुप्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश लिखा है। हमने इस ग्रन्थ को अनेक बार पढ़ा है। अन्य मतों के ग्रन्थों व सिद्धान्तों का भी कुछ-कुछ अध्ययन किया है। हमारा अनुभव व अनुमान है कि संसार के सभी मत-पन्थ के ग्रन्थों में पूर्ण या अधिकतम सृष्टि व मनुष् जीवन विषयक सत्य व उसके अर्थ केवल वेद और सत्यार्थ प्रकाश में ही पाये जाते हैं। यद्यपि न्यूनाधिक सत्य सभी मतों के ग्रन्थों में है, परन्तु अन्य मतों की पुस्तकों में सत्य के साथ-साथ कुछ ऐसी बातें भी हैं जो विज्ञान के विरूद्ध, अज्ञान पर आधारित, अंधविश्वास व पक्षपातपूर्ण, सामाजिक असमानता से पूर्ण और आज की परिस्थितियों में माननीय, आचरणीय व उपयोगी नहीं हैं। ईश्वर व जीवात्मा आदि के सत्य स्वरूप, सत्यज्ञान युक्त आचरण से जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक उपासना व जीवन के उद्देश्य का सही वर्णन वेद व सत्यार्थ प्रकाश से इतर ग्रन्थों में या तो अपूर्ण है या प्रायः नहीं है। **वैदिक शास्त्रों का यह भी निष्कर्ष है कि मनुष्य का जन्म परमात्मा के द्वारा भोग व अपवर्ग के लिए हुआ है। भोग का अर्थ है कि हमने अपने पूर्व जन्मों में जो शुभ व अशुभ कर्म किये थे जिनका कि अभी भोग व फल मिलना शेष है, उनके भोग, नये शुभ कर्मों को करने तथा जन्म-मरण के दुःखों से मुक्ति के लिए जिसे अपवर्ग या मोक्ष कहते हैं, हमें यह मनुष्य जन्म ईश्वर द्वारा प्रदान किया गया है।**

**मनमोहन कुमार आर्य**

महर्षि दयानन्द अपने विश्व प्रसिद्ध अन्यतम ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश को बनाने का प्रयोजन स्वयं ही लिखते हुए कहते हैं कि **मेरा इस ग्रन्थ को बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य-सत्य अर्थ का प्रकाश करना है, अर्थात् जो सत्य है उस को सत्य और जो मिथ्या है उस को मिथ्या ही प्रतिपादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाय। किन्तु जो पदार्थ जैसा है, उसको वैसा ही कहना, लिखना और मानना सत्य कहाता है। जो मनुष्य पक्षपाती होता है, वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मतवाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है, इसलिए वह सत्य मत को प्राप्त नहीं हो सकता।** इसीलिए विद्वान आप्तों (धर्म के पारदर्शी विद्वान) का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात् वे स्वयं अपना हिताहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें।

एक अन्य महत्वपूर्ण बात भी महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में लिखी है जिसे सारे संसार का साहित्य पढ़ने पर भी अनुमानतः उपलब्ध होना सम्भव नहीं है। वह लिखते हैं – **‘मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है। परन्तु इस ग्रन्थ (सत्यार्थ प्रकाश) में ऐसी बात नहीं रक्खी है। और न किसी का मन दुखाना या किसी की हानि पर तात्पर्य है, किन्तु जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्यासत्य को मनुष्य जान कर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें, क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जति की उन्नति का कारण नहीं है।‘** हम समझते हैं कि महर्षि दयानन्द के इन विचारों से किसी को भी असहमति नहीं हो सकती।

महर्षि दयानन्द यह भी कहते हैं कि यद्यपि आजकल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मतों में हैं, वे पक्षपात छोड़ सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो-जो बातें सब के अनुकूल सब में सत्य हैं, उनका ग्रहण और जो एक दूसरे से विरूद्ध बातें हैं, उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्ते - वर्तावें तो जगत् का पूर्ण हित होवे। क्योंकि **विद्वानों के विरोध से अविद्वानों में विरोध बढ़ कर अनेकविध दुःख की वृद्धि और सुख की हानि होती है।** इस हानि ने, जो कि स्वार्थी मनुष्यों को प्रिय है, सब मनुष्यों को दुःख के सागर में डुबा दिया है। **इनमें से जो कोई (मनुष्य) सार्वजनिक हित लक्ष्य में धर कर प्रवृत्त होता है, उससे स्वार्थी लोग विरोध करने में तत्पर होकर अनेक प्रकार के विघ्न करते हैं।** परन्तु **‘सत्यमेव जयति नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।‘** अर्थात् सर्वदा सत्य का विजय और असत्य का पराजय और सत्य ही से विद्वानों का मार्ग विस्तृत होता है। इस दृढ़ निश्यय के आलम्बन से आप्त लोग परोपकार करने से उदासीन होकर कभी सत्य-अर्थ का प्रकाश करने से नहीं हटते। वह आगे कहते हैं कि यह बड़ा दृढ़ निश्चय है कि **‘यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्।‘** इस गीता के वचन का अभिप्राय यह है कि **जो-जो विद्या और धर्म प्राप्ति के कर्म हैं, वे प्रथम करने में विष के तुल्य और पश्चात् अमृत के सदृश होते हैं। ऐसी बातों को चित्त में धरके मैंने इस ग्रन्थ को रचा है।** वह सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ के पाठकों से निवेदन पूर्वक कहते हैं कि उनके इस ग्रन्थ को वह पहले प्रेम से देख कर सत्य विदित कराने के उनके तात्पर्य को जानकर इष्ट अर्थात् ईश्वर व धर्म की प्राप्ति आदि का लाभ प्राप्त करें।

सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ को लोग प्रायः अपनी अज्ञान और स्वार्थ बुद्धि से देखते हैं और इसकी गहराई में जाये बिना कह बैठते हैं कि इसमें दूसरे मतों का खण्डन किया गया है। यह आरोप सत्य नहीं, अपितु पूर्णतयः असत्य एवं स्वार्थपूर्ण है। महर्षि दयानन्द स्वयं लिखते हैं कि **इस ग्रन्थ को बनाने में यह अभिप्राय रखा गया है कि जो-जो सब मतों में सत्य-सत्य बातें हैं, वे-वे सब में अविरुद्ध होने से उनको स्वीकार करके जो-जो मतमतान्तरों में मिथ्या बातें हैं, उन-उन का खण्डन किया है।** यहां वह कह रहे हैं कि सब मतों की सत्य बातें उन्हें स्वीकार्य हैं तथा मत-मतान्तरों की मिथ्या बातों का उन्होंने खण्डन किया है। **हम सभी बन्धुओं से पूछना चाहते हैं कि क्या मिथ्या बातों का खण्डन नहीं होना चाहिये?** यदि हां, तो फिर सत्यार्थ प्रकाश में अनुचित कुछ भी नहीं है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि जो सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ का विरोध करता है वह मिथ्याचारी अर्थात् मिथ्या बातों का समर्थक और सत्य बातों का विरोधी है। महर्षि आगे लिखते हैं कि सब मत-मतान्तरों की गुप्त वा प्रकट बुरी बातों का प्रकाश कर विद्वान, अविद्वान व सब साधारण मनुष्यों के सामने रक्खा है जिससे सब बातों को जानकर व उन सब का विचार होकर परस्पर प्रेमी व मित्र हो के एक सत्य मत में स्थित होवें।

हम यहां महर्षि दयानन्द के इन महत्वपूर्ण विचारों को भी प्रस्तुत करने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहे हैं जिसमें वह कहते हैं कि **यद्यपि मैं आर्यावत्र्त (भारत) देश में उत्पन्न हुआ और बसता हूं तथापि जैसे इस देश के मत-मतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न कर याथातथ्य प्रकाश करता हूं, वैसे ही दूसरे देशस्थ वा मत वालों के साथ भी वर्तता हूं। जैसा स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषय में वर्तता हूं वैसा विदेशियों के साथ भी तथा सब सज्जनों को भी वर्तना योग्य है। क्योंकि मैं भी जो किसी एक का पक्षपाती होता तो जैसे आजकल के (लोग व धार्मिक विद्वान) स्वमत की स्तुति, मण्डन और प्रचार करते और दूसरे मत की निन्दा, हानि और बन्ध करने में तत्पर होते हैं, वैसे मैं भी होता, परन्तु ऐसी बातें मनुष्यपन से बाहर हैं। क्योंकि जैसे पशु बलवान् हो कर निर्बलों को दुःख देते और मार भी डालते हैं, जब मनुष्य शरीर पाके वैसा ही कर्म करते हैं तो वे मनुष्य स्वभावयुक्त नहीं, किन्तु पशुवत् हैं। और जो बलवान् होकर निर्बलों की रक्षा करता है वही मनुष्य कहाता है और जो स्वार्थवश होकर पर-हानिमात्र करता रहता है, वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है।**

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश को 14 समुल्लासों में पूर्ण किया है। पहले 10 समुल्लास सत्य व वैदिक मत की मान्यताओं पर प्रकाश डालते हुए उनका पोषण करते हैं जो कि प्रायः सभी अध्येताओं के लिए निर्विवाद रूप से स्वीकार्य हैं। अन्त के चार समुल्लासों में भारतीय व अन्यदेशीय मतों की मिथ्या व अज्ञानपूर्ण मान्यताओं की समालोचना, आलोचना या खण्डन किया गया है जिसका उद्देश्य लोगों को सत्यासत्य के बोध में सहायता करना है। अपने ग्रन्थ की भूमिका का समापन करते हुए वह लिखते हैं कि इन मतों के थोड़े-थोड़े ही दोष प्रकाशित किए हैं जिनको देखकर मनुष्य लोग सत्याऽसत्य मत का निर्णय कर सकें और सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करने कराने में समर्थ होवें, क्योंकि एक मनुष्य जाति में बहका कर, विरूद्ध बुद्धि कराके, एक दूसरे को शत्रु बना, लड़ा मारना विद्वानों के स्वभाव से बहिः (विरूद्ध) है। इस वाक्य में **“एक मनुष्य जाति”** का प्रयोग कर उन्होंने सारे विश्व के मनुष्यों को एक जाति का स्वीकार कर अपनी महानता का परिचय दिया है जबकि अन्य मतस्थ लोग संसार के लोगों को नाना प्रकार के धर्म व मत-मतान्तरों में विभाजित कर देखते हैं तथा अपने गुप्त प्रयोजनों के लिए लोभ, भय, प्रलोभन व रक्तपात तक किया करते हैं। महर्षि ने इसी क्रम में कहा है कि **यद्यपि इस ग्रन्थ को देखकर अविद्वान लोग अन्यथा ही विचारेंगे, तथापि बुद्धिमान लोग यथायोग्य इस का अभिप्राय समझेंगे, इसलिये मैं अपने परिश्रम को सफल समझता और अपना अभिप्रायः सब सज्जनों के सामने धरता हूं।** वह सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ के पाठकों से निवेदनपूर्ण शब्दों में कहते हैं कि इस ग्रन्थ को देख-दिखला व पढ़कर मेरे श्रम को सफल करें। और इसी प्रकार पक्षपात न करके सत्यार्थ का प्रकाश करना मुझ वा अन्य सभी महाशयों का मुख्य कर्तव्य काम है। भूमिका को समाप्त कर वह ईश्वर से प्रार्थना के स्वरों में कहते हैं कि **सर्वात्मा सर्वान्तर्यामी सच्चिदानन्द परमात्मा अपनी कृपा से इस (उनके) आशय को विस्तृत और चिरस्थायी करे।**

हम समझते हैं कि महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ लिखकर मानवता की सबसे अधिक व अपूर्व सेवा की है। आर्य समाज का एक नियम ही उन्होंने यह बनाया है कि सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। एक अन्य नियम में वह कहते हैं कि सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर करने चाहिये। इसका अर्थ यह भी है कि यदि किसी मत में कुछ भी सत्य प्राप्त हो तो उसे स्वीकार करना चाहिये। हम यह भी अनुभव करते हैं कि संसार के प्रत्येक मनुष्य को सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमिक सत्य शिक्षाओं व मान्यताओं का अध्ययन कर उसको अपनाना चाहिये जिससे भेदभाव की दीवारें गिरकर श्रेष्ठ विश्व का निर्माण हो सके। सत्य की स्थापना के लिए असत्य का खण्डन आवश्यक है। इसी लिए महर्षि दयानन्द ने असत्य का खण्डन किया। यह ऐसा ही है कि अन्धकार को दूर करने के लिए दीपक को जलाना। सत्यार्थ प्रकाश एक दीपक है जिसने मत-मतान्तरों के अविद्या व मिथ्या विश्वासों के अन्धकार को दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अभी इस दिशा में बहुत कार्य होना शेष है।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**